Research Paper E-ISSN NO : 2455-295X | VOLUME : 5 | ISSUE : 6 | JUNE 2019

ईसा पूर्व छठी शताब्दी में नास्तिक सम्प्रदायों का उद्‌भव तथा विकास का आधार

AMIT KUMAR GUPTA [1]

[1] **RESEARCH SCHOLAR, DEPARTMENT OF HISTORY, B.R. AMBEDKAR BIHAR, UNIVERSITY, MUZAFFARPUR.**

ABSTRACT:

KEYWORDS:

मानव का कई व्यक्तिगत दुगुर्ण है। यह व्यक्तिगत दुर्गुण कही न कहीं व्यक्ति के आत्मकेन्द्रीत होता है। भौतिकवाद एवं नास्तिकवाद इस बात को ज्यादा प्रखर रूप में उभारता है। इस दशा में व्यक्ति अपना व्यक्तिगत हित को देखता है। अगर इस पूरी अवधारणा का विकास संस्थागत एवं एक आन्दोलन के रूप में हो तो वह ज्यादा रोचक हो जाता है। भारत के इतिहास में अगर **दृष्टिपात** किया जाए तो एक ऐसा काल आता है जिसमें नास्तिकवाद का विचार प्रखरता से प्रतीत होता है। ईसा पूर्व छठी शताब्दी का काल धार्मिक **दृष्टि** से क्रान्ति अथवा महान परिवर्तन का काल माना जाता है। इस समय परम्परागत वैदिक धर्म एवं समाज में व्याप्त कुरीतियां, पाखण्डों, कुप्रथाओं, छुआ–छूत, ऊँच–नीच आदि के विरूद्ध आन्दोलन उठ खड़ा हुआ।

समय के प्रवाह के साथ नवीन विचारधाराओं का अविर्भाव हुआ। जिसके तहत अनेक सम्प्रदाय आस्तित्व में आये जिन्होंने विभिन्न मतों एवं वादों का प्रचार किया। समाज में धूम–धूमकर वे अपने सिद्धांतों का प्रचार करने लगे तथा लोगों को अपने–अपने मत में दीक्षित करने लगे। इन्हीं सम्प्रदायों में एक ''नास्तिक सम्प्रदायों'' का एक स्कूल रहा। जिस समय भारत में महावीर तथा बुद्ध एवं नास्तिक सम्प्रदायों का उदय हुआ उसी समय चीन में कनफ्यूशियस तथा लाओत्सो, ईरान में जरथुस्त्र, जुडिया में जेरेमिआ तथा ईरान में पाइथागोरस का अविर्भाव हुआ। इन्होंने भी अपने अपने देशों के परम्परागत धर्मों में व्याप्त कुरितियों से लड़ा।

भारत में अगर हम नास्तिक सम्प्रदायों का विवरण प्रस्तुत करे तो सर्वपथम बौद्ध साहित्य से ज्ञात होता है कि महात्मा बुद्ध के उदय के पूर्व समाज में छः बौद्धेत्तर आचार्य सर्वाधिक महत्वपूर्ण थे। इनके अलावा भी कई नास्तिक एवं भौतिकवादी चिंतक हुए जो अपना प्रभाव भारतीय जन मानस के **मस्तिष्क** पर डाले।

अब सबसे रोचक विषय यह है कि इन नास्तिक सम्प्रदायों का विचारधारा और चिंतन क्या था? ''खत्तविज्जवाद'' नास्तिक संप्रदाय का मुख्य बल था की **मनुष्य** को जीवन में ''घोर स्वार्थी'' बनना चाहिए। व्यक्ति को पहले अपने **स्वार्थपूर्ति** करनी चाहिए एवं समाज के हितों को छोड़ देनी चाहिए। अब चिंतन का प्रथम तथ्य यह है कि तत्कालिक धार्मिक एवं सामाजिक कैसी जटिलता था कि व्यक्ति को सर्वव्यापि बना दिया। इसी संदर्भ में पूरन कस्यप का विवरण आता है कि वे अक्रियावाद अथवा अकर्म के प्रचारक थे। जिन्होंने यह मत रखा कि **मनुष्य** के अच्छे या बुरे कर्मो का कोई फल नहीं होता है। यह विचारधारा सामाजिक दायित्वों से परे हैं और उनके बुरे कर्म समाज को किस प्रकार प्रभावित करेगा इसका बोध आवश्यक नहीं है। यह विचारधारा धार्मिक एवं सामाजिक विरक्ती का ज्ञान कराता है।

मक्खलि गोशाल ''आजीवक'' नामक स्वतंत्र सम्प्रदाय स्थापित किया। इनका मत नियतिवाद (भाग्यवाद) कहा जाता है जिसके अनुसार संसार की प्रत्येक वस्तु भाग्य द्वारा पूर्व नियन्त्रित एवं संचालित होती है। **मनुष्य** के जीवन पर उसे कर्मों का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। मक्खलि गोशाल भी ईश्वर की सत्ता में विश्वास नहीं करते थे तथा जीवन और पदार्थ को अलग–अलग मानते थे। मक्खलि गोशाल के चिंतन का अगर तटस्थ अध्ययन करें तो उनके चिंतन में निराशावाद को **स्पष्ट** देखा जा सकता है। यह विचारधारा तात्कालिक धार्मिक एवं सामाजिक परिस्थिति से ही उत्पन्न हुआ था। जहां चारो तरफ आडम्बर युक्त धर्म का बोलबाला था और समाज के **शोषित** वर्ग अपना नियती मान कर जीवन निर्वाह करते आ रहे थे। इन्हीं विचारधारा के तहत **पकुच्चकच्चायन** के विचार थे। इन्हें नित्यवादी कहा जाता है। इन्होंने सात तत्वों का नित्य बताया –

पृथ्वी, जल, अग्नि, सुख, दुःख और आत्मा।

पुब्बेकतवाद के अनुसार **मनुष्य** के वर्तमान जीवन के सुख–दुःख उसके पूर्व जन्म के कर्मों के परिणाम होते हैं। इस विचारधारा के जनन का प्रमुख कारण समाज में ही व्याप्त था। क्योंकि तत्कालिक समाज में वैश्य एवं शुद्र **शोषित** वर्ग था। यह वर्ग कलांतर से **शोषित** का शिकार होते आ रहे थे। अतः वे अपने जीवन का **नियती** मान बैठे थे। इन **शोषित** वर्ग को जब इस चिंतन से परिचय हुआ तो सभी **कष्टों** को पूर्व जन्म का कर्म ही मान लिया। यह बात इस लिए भी व्यवहारिक लगता है क्योंकि तत्कालिक समय में बौद्धग्रन्थ में इन संप्रदायों की संख्या 62 तथा जैन ग्रन्थों में 368 बताई गई है। विभिन्न संप्रदायों की एक बड़ो संख्या का होना तत्कालिक समाज के आवश्यकता एवं मग्न को ज्यादा **स्पष्ट** करती है।

इन चिंतकों के अलावा भी कई चिंतक थे जो तत्कालिक समाज को प्रभावित किया जिसमें अजितकेसकम्बलिन् जो उच्छेदवादी थे, संजय बेलट्ठपुत्र जो सन्देहवादी थे जिन्होंने न तो किसी मत को स्वीकार किया और न किसी का खण्डन ही किया। इसके अलावा अहेतुवाद था जिसमें सांसारिक वस्तुओं की उत्पत्ति का काई भी कारण स्वीकार नहीं करता था। उच्छेदवाद के तहत किसी भी वस्तु की सत्ता को स्थायी नहीं माना गया तथा बताया गया कि मृत्यु के बाद सब विनष्ट हो जाता है।

इस तरह विभिन्न नास्तिक एवं भौतिकवादी विचारधारा का जनन एवं ऐसा प्रतिरूप प्रस्तुत करता है जिसमें यह बात **स्पष्ट** हो जाती है कि इस बढ़ी संख्या में धार्मिक संप्रदायों का विकास तत्कालिक धार्मिक एवं सामाजिक जटिलता ही था। जो लोगों को अपनी तरफ **आकर्शित** किया। जब लोगो को अपनी अवस्था के अनुरूप इन चिंतकों के तरफ प्लायन किए तब विभिन्न चिंतकों की संख्या में भी बढ़ोतरी हुई।

इन अनेक मतों एवं सम्प्रदायों में महावीर और गौतम के सम्प्रदाय ही चिर–स्थायी सिद्ध हुए। अन्य या तो इन्हीं में मिल गये या महत्वहीन हो गये। महावीर तथा गोतम इस शताब्दी की क्रान्ति के अग्रदूत सिद्ध हुए। जैन तथा बौद्ध मत मात्र दार्शनिक अथवा धार्मिक सम्प्रदाय ही नहीं थे, अपितु वे जीवन की पद्धतियां भी थे जिन्होंने अपने समय की सामाजिक एवं धार्मिक कुरीतियों का खण्डन करते हुए लोक–कल्याण का मार्ग प्रशस्त किया।

REFERENCES

1. Altekar. A. S. : State and Government in Ancient India (1949)

2. Chanana, D. R. : Lokayata – A Study of Ancient India

Materialism (1959)

3. Majumdar, R. C. : The classical Accounts of India (1960)

4. Upadhya, G.P. : Brahmanas in Ancient India (1978)

5. शुक्ल, देवीदत्त : प्राचीन भारत में जनतंत्र (1966)

6. Wagle, N. : society at the Time of the Buddha (1966)

7. Smith V. A. : Early History of India (1904)